आदि शंकराचार्य का भारतीय संस्कृति में योगदान – एक अध्ययन

कनकलता कुमारी

शोध छात्रा, स्नातकोत्तर दर्शनशास्त्र विभाग, ति.मां. भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

सार : भारतीय हिंदुत्व की धारा के प्राणतत्व, असाधारण प्रतिभा के धनी आद्य जगदगुरू शंकराचार्य ने सात वर्ष की उम्र में ही वेदों के अध्ययन मनन में पारंगतता हासिल कर ली थी। जिस समय भारतीयता और हिंदुत्व की जड़ें चरमरा रही थीं, तब शंकर का इस पुण्यभूमि पर प्रादुर्भाव हुआ। लुप्तप्राय सनातन धर्म की पुनःस्थापना और हिंदू धर्म के प्रचार–प्रसार में आदि शंकराचार्य का महान योगदान है। उन्होंने भारतीय सनातन परम्परा को पूरे देश में फैलाने के लिए भारत के चारों कोनों में चार शंकराचार्य मठों की स्थापना, चारों कुंभों की व्यवस्था, वेदांत दर्शन के शुद्धाद्वैत संप्रदाय के शाश्वत जागरण के लिए दशनामी नागा संन्यासी अखाड़ों की स्थापना, पंचदेव पूजा प्रतिपादन उन्हीं की देन है। उन्होंने अपने अथक प्रयास से भारतीय समाज को एकता के सूत्र में पिरोया। भारतीय दर्शन को जगतगुरू शंकराचार्य का सबसे अमूल्य योगदान अद्वैत वेदांत का सिद्धांत है। प्रस्तुत आलेख इसी संदर्भ में आदि शंकराचार्य का भारतीय संस्कृति में योगदान का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

शब्द कुंजी : शंकराचार्य, सनातन धर्म, वेदांत दर्शन, अद्वैत वेदांत, वैदिक साहित्य।

भूमिका

भारतीय इतिहास और हिंदू सनातन धर्म के सबसे महत्वपूर्ण दार्शनिकों और धार्मिक नेताओं में से एक आदि शंकराचार्य, एक धार्मिक सुधारक, अद्वैत वेदांत दर्शन के सूत्रधार और संहिताकार, उपनिषदों पर आधारित गैर–द्वन्द्वात्मक प्रणाली के रूप में व्यापक रूप से प्रतिष्ठित हैं। उनकी प्रभा आज भी दिग्दिगन्त को आलोकित कर रही है। उनका आविर्भाव हुए एक सहस्र वर्ष से अधिक हुआ, फिर भी उनकी कीर्ति–कौमुदी उसी अक्षुण्ण रूप में आज भी भारत के नभोमंडल को उद्भासित कर रही है। शंकराचार्य अलौकिक प्रतिभासम्पन्न महापुरूष थे। ये असाधारण विद्वत्ता, तर्कपटुता, दार्शनिक सूक्ष्म दृष्टि, रहस्यवादी आध्यात्मिकता, कवित्वशक्ति, धार्मिक पवित्रता, कर्तव्यनिष्ठा तथा सर्वातिशायी विवेक और वैराग्य की मूर्ति थे। प्राचीन काल से आज तक भारत में जितने दार्शनिक हुए उनमें से जगद्गुरू शंकराचार्य और उनके 'वेदान्त दर्शन' का स्थान सर्वश्रेष्ठ माना जाता है।

भारतीय दर्शन जिन सर्वश्रेष्ठ सूक्ष्म विचारकों के उदात्त मस्तिष्क की देन है, जिन्होंने अनवरत एकान्तिक साधना एवं तपस्या के द्वारा उस परमतत्त्व का साक्षात्कार किया है, उन मध्यकालीन भारत के धार्मिक उपदेशकों के नानाविध समूहों के मध्य अपनी उच्चकोटि की भावना अपरिमेय विश्व के विषय में आत्म–सम्बन्धी गूढ़ तत्त्वों के स्फूर्तिदायक प्रक्षेण के कारण सूर्य की भाँति देदीप्यमान हैं। ब्रह्मसूत्रों पर लिखित शांकरभाष्य के अध्ययनाध्ययन की प्रवृत्ति ने प्राचीन भाष्यों की पद्धतियों को प्रायः विलुप्त कर दिया है। इसीलिए भारतीय समाज की उदात्त भावना जो धर्मानुप्राणित है, ने शंकर को जगद्गुरू के रूप में स्वीकार किया है।

दार्शनिक और साहित्यिक योगदान

आदि शंकराचार्य का आगमन भारतीय दर्शन और धर्म के इतिहास में और प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तिगत आध्यात्मिक विकास में एक ऐतिहासिक घटना है। उनके उपदेशों से ईमानदार साधक के लिए सर्वोच्च ब्रह्म की सच्चाई का पता चलता है। उनका योगदान कल्पना से परे है; टिप्पणीकार के रूप में इनमें से कुछ योगदान जो हिंदू सनातन विश्वास के खजाने हैं, ये हैं – विवेकचूड़ामणि, आत्म बोध, अप्रोक्ष अनुभूति, आनंद लहरी, आत्मा–अनात्मा विवेक, दृग–दृश्य विवेकानंद उपदेश सहश्री। इनकी 300 से अधिक रचनाएँ मानी जाती है जो – भाष्य, व्याख्यात्मक और काव्य–संस्कृत भाषा में लिखी गई हैं। हालाँकि, उनमें से अधिकांश को प्रामाणिक नहीं माना जा सकता है। उनकी कृति ब्रह्म–सूत्र–भाष्य, ब्रह्म–सूत्र पर भाष्य है, जो वेदांत स्कूल का एक मूल ग्रंथ माना जाता है। शंकराचार्य उपनिषद पर टिप्पणी के संभावित अपवाद के साथ शंकराचार्य के लिए जिन प्रमुख उपनिषदों पर टिप्पणी की गई है, वे निश्चित रूप से सभी वास्तविक हैं। इसकी बहुत संभावना है कि वे योग–सूत्र–भाष्य–विवरण के लेखक हैं, योग–सूत्र पर व्यास के भाष्य का विस्तार, योग विद्यालय का मूल ग्रंथ माना जाता है। उपदेशसहश्री, जो कि शंकर के दर्शन का एक अच्छा परिचय प्रस्तुत करता है, उनकी एक प्रामाणिक रचना मानी जाती है।"[1]

श्री आर. कृष्णमूर्ति ने द हिंदू में एक लेख में लिखा है कि "आदि शंकराचार्य ने मानव जाति को उन सभी दुःखों से राहत देने की कोशिश की जो एक और सभी को प्रभावित करते हैं। इस दुनिया में इंसानों को तीन तरह के दुख झेलने पड़ते हैं। आध्यात्मिक दृष्टांत में इन्हें – आध्यात्मिक, आदि दैविक और आदि भुतिका बताया गया है। आध्यात्मिक से तात्पर्य व्यक्तिगत स्वयं और सर्वोच्च स्व के बीच के संबंध से है। यह सत्य पर आधारित है कि व्यक्ति स्वयं सर्वोच्च भावना का प्रकटीकरण है। आदि दैविक से तात्पर्य भाग्य से होने वाले दुःखों से है और आदि भूतिका उन दुखों से है जो भौतिक संसार और शरीर के कारण होते हैं। आदि शंकर का प्रयास इसके निवारण के लिए है; इसके लिए उन्होंने रक्षासूत्र अविद्या को नष्ट कर दिया जो सभी दुखों का मूल कारण है। अज्ञानता को दूर करने से आत्म बोध होता है जो जीव का अंतिम लक्ष्य है।"[2] एच.पी. ब्लावात्स्की ने उनके योगदान के बारे में कहा कि "पृथ्वी पर दिखाई देने वाले सबसे महान दिमागों में से एक, साथ ही सबसे बड़े योगी भी माने जाते हैं। अद्वैत वेदांतियों को नास्तिक कहा जाता है, क्योंकि वे सभी को एक ही परब्रह्म को मानते हैं, दो या निरपेक्ष वास्तविकता को एक भ्रम के रूप में स्वीकारते।"[3] भले ही उन्होंने बहुत कम जीवन जीया और बत्तीस साल की उम्र में अपने शरीर को त्याग दिया, भारत और हिंदू सनातन धर्म पर उनका प्रभाव बेहद प्रभावशाली है। उन्होंने वैदिक चिन्तन के बारीक रूप को फिर से पेश किया। उनकी परंपराएं और शिक्षाएं स्मृति आधारित हैं और उन्होंने संत और मठों को प्रभावित किया है।

"वेदांत स्कूल ज्यादातर उपनिषदों पर (जो खुद को वेदांत, वेदों का अनुगामी कहा जाता है), अन्य स्कूलों के विपरीत है जो कर्मकांडी ब्राह्मणों पर, या उनके संस्थापकों द्वारा लिखित ग्रंथों पर जबरदस्त तनाव देते हैं। यह ज्ञात है कि शंकर का ब्रह्म

निर्विशेष, निर्गुण, निराकार और अकर्ता है। इसका मतलब है कि वह सभी जरूरतों और इच्छाओं से ऊपर था। ध्यान के बारे में, शंकर ने सीधे तौर पर योग और इसके विभिन्न विषयों को मोक्ष प्राप्त करने के एक प्रत्यक्ष साधन के रूप में मानने से नकार दिया। शंकर के अनुसार, मोक्ष को केवल मन की एकाग्रता के माध्यम से ही प्राप्त किया जा सकता है।"[4] उन्होंने हिंदुओं के विभिन्न समूहों को एकजुट करने का प्रयास किया। उन्होंने विष्णु, शिव, गणेश, सूर्य और शक्ति आदि विभिन्न हिन्दू देवताओं के नाम पर होनेवाली लड़ाई का विरोध किया। शंकर ने प्रत्येक समूह के लिए पौराणिक श्लोक बनाए और इन सभी समूहों को एकसाथ लाने का प्रयास किया। इससे हिंदू धर्म के संप्रदायों और उनके अनुष्ठानों को एकजुट करने में मदद मिली।

ज्ञान के प्राधान्य का साग्रह प्रतिपादन करने वाले और कर्म को अविद्याजन्य मानने वाले संन्यासी शंकर का समस्त जीवन लोक संग्रहार्थ निष्काम कर्म को समर्पित था। उन्होंने भारतवर्ष का भ्रमण करके हिन्दू समाज को एक सूत्र में पिरोने का कार्य किया। शंकराचार्य का शिष्यमण्डल दशनामी सम्प्रदाय के नाम से जाना जाता है, जिसमें सरस्वती, आश्रम, तीर्थ, भारती, वन, आरण्य, पर्वत, गिरि, सागर और पुरी – इन दश नाम वाले संन्यासी होते हैं। इनमें भी प्रथम चार प्रमुख हैं जिनमें से शंकराचार्य द्वारा संस्थापित मठों के जगद्गुरू शंकराचार्य बनाये जाते हैं। अन्तिम छः नागा साधु के नाम से विख्यात हैं जिनके छः अखाड़े और बावन मढ़ी हैं। इनके सर्वोच्च अधिकारी को महामण्डलेश्वर कहा जाता है।

शंकरकालीन दार्शनिक परिस्थितियाँ भी शंकर के लिए काफी उपादेय सिद्ध हुई। उस काल में एक ओर बौद्ध धर्म का ह्रास तथा दूसरी ओर मीमांसक विद्वान् वैदिक कर्मकांड के आध्यात्मिक महत्त्व को समझाने में असफल सिद्ध हो रहे थे। ऐसी परिस्थिति में एक ऐसे धर्म एवं दर्शन के प्रचार–प्रसार की आवश्यकता थी जो समाज में धार्मिक एवं दार्शनिक एकता की स्थापना कर सके। यह कार्य अपने अद्वैत वेदान्त की स्थापना के द्वारा किया। यद्यपि यह कतई नहीं कहा जा सकता है कि शंकर पूर्ववर्ती काल में अद्वैत सिद्धान्त अनाविष्कृत था क्योंकि शंकर द्वारा अपने प्रतिपादित ग्रंथों के मध्य तथा अन्त में जो पुष्पिका, ग्रन्थकार–नाम उसके संबंध में अन्य आवश्यक परिचय देने वाला एवं अध्याय तथा ग्रन्थ समाप्ति का द्योतक संदर्भ 'पुष्पिका' कहलाता है, उपलब्ध होती है, निश्चय ही शंकर पूर्ववर्ती आचार्यों तथा उनके अद्वैत प्रतिपादन का प्रस्फुट विवरण अवश्य उपलब्ध है। फिर भी इनकी विशिष्टता प्रस्थानत्रयी पर लिखित उनके भाष्यों एवं अद्वैत प्रतिपादन के कारण अद्वितीय है।

आज जब हम अद्वैतवाद की बात करते हैं तो हमारा तात्पर्य मुख्य रूप से शंकराचार्य के अद्वैतवाद से ही होता है। वैसे भी अद्वैतवाद की समस्त शाखा एवं उपशाखाओं में सर्वाधिक महत्व शंकर के अद्वैतवाद का ही है।

शंकराचार्य का अद्वैतवाद भारतीय चिन्तन धारा का चरमोत्कर्ष है। आज भारत में जितने भी दर्शन एवं धर्म मानव जीवन में उतरे हुए हैं उन पर अद्वैतवाद का कुछ ना कुछ प्रभाव अवश्य है । भारतेत्तर दर्शन एवं धर्मों से भी यह बड़ा मेल खाता है। इसका ब्रह्म यहूदी धर्म के जेहोवा, पारसी धर्म के आहुरमज्द, ईसाई धर्म के गौड और इस्लाम धर्म के अल्लाह के समान निर्गुण एवं सर्वशक्तिमान हैं। अन्तर केवल इतना है कि जेहोवा, आहुरमज्द, गौड और अल्लाह इस ब्राह्मण के कर्ता मात्र हैं जबकि अद्वैतवाद का ब्रह्म इसका कर्ता एवं उत्पादक, दोनों कारण है। जगत के कर्ता के रूप में ब्रह्म को सगुण रूप देकर उसे ईश्वर की संज्ञा से विभूषित कर शंकर ने ईश्वर भक्त लोगों के उदय को भी स्पर्श किया है।

दर्शन के क्षेत्र में

शंकर भारत वैदिक साहित्य के दार्शनिक और धार्मिक इतिहास के महान विभूतियों में से एक हैं। उन्हें मानव विचार के इतिहास में महान आध्यात्मिक प्रवृत्तियों में से एक कहा जाता है – हम कह सकते हैं कि वे न केवल भारतीय विचार, बल्कि मानव विचार का इतिहास है। "उन्हें भारत का सबसे बड़ा दार्शनिक कहा गया है और विश्व के विद्वानों के लिए भारत के दार्शनिक योगदान का शिखर कहा गया है। शंकर व्यापक रूप से एक महान दार्शनिक के रूप में माने जाते हैं जो पूर्वी विचारकों में प्लेटोनिक प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं।"[5]

भारतीय दर्शन के क्षेत्र में शंकराचार्य ने एक युगान्तकारी क्रान्ति की है। उन्होंने भारतीय दर्शन के इतिहास को विशेषतः अद्वैतवेदान्त के इतिहास को, दो युगों प्राक एवं शंकरोत्तर युग में बांट दिया है। प्रथम युग में कर्म का महत्त्व था और द्वितीय युग में ज्ञान का।

यह आमतौर पर कहा जाता है, "तर्क और तत्वमीमांसा सीखने के लिए, शंकर की टिप्पणियों पर जाएं, व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए, जो भक्ति को प्रकट करता है और मजबूत करता है, जैसे विवेका चूड़ामणि, आत्म बोध, अपरोक्ष अनुभूति, आनंद लहरी, आत्म–अनात्म विवके, दृक–दृश्य विवेक और उपदेशा सहश्री" ।[6] शंकरा ने छंदों में असंख्य मूल रचनाएँ लिखीं जो मिठास, माधुर्य और विचार में अनमोल हैं। वह निर्गुण / सगुण भेद पर ध्यान केंद्रित करके ब्राह्मण मुद्दे की पूरी गुणवत्ता से संबंधित है जो पूरी अद्वैत स्थिति के लिए बिल्कुल महत्वपूर्ण है। शंकर एक बहुत ही कठोर अद्वैतवाद – या कठोर गैर–द्वैतवाद का अनुसरण करता है – इस अर्थ में कि वह किसी भी कथन को स्वीकार करने वाला नहीं है जो ब्राह्मण के गुणों या धर्मों को दर्शाता है। शंकर के सर्वोच्च ब्रह्म निर्गुण, निराकार, निर्विष और अकर्त्ता है, जैसा कि पहले भी कहा गया है। वह सभी जरूरतों और इच्छाओं से परे है।

शंकर कहते हैं, "यह आत्म स्वयं स्पष्ट है। यह आत्मा या स्व की स्थापना स्वयं के अस्तित्व के प्रमाण से नहीं होती है। इस आत्मा का खंडन करना संभव नहीं है, क्योंकि वह इसे अस्वीकार करता है। आत्मा सभी प्रकार के ज्ञान का आधार है। स्व भीतर है, स्व बिना है, स्व पहले है और स्व पीछे है, स्व दाहिने हाथ पर है, स्व बाईं ओर है, स्व ऊपर है, स्व नीचे है"।

"अद्वैत" शब्द अनिवार्य रूप से स्वयं (आत्मा) और संपूर्ण (ब्रह्म) की पहचान को दर्शाता है। उन्होंने लिखा, "एकमेव आद्यतेम् ब्रह्म" (पूर्ण एक ही है, दो नहीं)। कोई दूसरा नहीं है, लेकिन एक विशाल बहुलता की उपस्थिति है। गन्ने के कई डंठल हो सकते हैं, लेकिन उन सभी के रस में एक जैसी मिठास होती है। जीव कई हैं, लेकिन उनकी सांस समान है। राष्ट्र कई हैं, लेकिन पृथ्वी एक है। इस तरीके से, शंकर ने दुनिया को बताया कि यह एकता है जो स्पष्ट विविधता को रेखांकित करती है।

'सत्यम–ज्ञानम्–अनंतम–आनंदम' अलग गुण नहीं हैं। वे ब्राह्मण का बहुत सार है। ब्राह्मण का वर्णन नहीं किया जा सकता है, क्योंकि वर्णन का अर्थ है भेद। ब्राह्मण को उसके अलावा किसी अन्य से अलग नहीं किया जा सकता है। उद्देश्य दुनिया–नाम और रूपों की दुनिया–कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। अकेले आत्मा का वास्तविक अस्तित्व है। विश्व केवल व्यवहारिक या अभूतपूर्व है।

शंकर 'केवल अद्वैत' दर्शन की प्रतिपादक थे। उनकी शिक्षाओं को निम्नलिखित शब्दों में संक्षेपित किया जा सकता है: "ब्रह्म सत्य जगत मिथ्या, जीवो ब्रह्मैव न अपराह्वी"[7] ब्रह्म अकेला ही वास्तविक है, यह संसार असत्य है; जीव ब्रह्म के समान है। ब्रह्म सत्यम ("ब्रह्म ही वास्तविकता है"): वेदांत में, "सत्यम" (वास्तविकता) शब्द बहुत स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है और इसका एक विशिष्ट महत्व है। इसका अर्थ है, "जो किसी भी परिवर्तन के दौर से गुजरते हुए (सभी समय – अतीत, वर्तमान और भविष्य) के तीनों अवधियों में मौजूद है, और चेतना की तीनों अवस्थाओं (जाग्रत अवस्था, स्वप्न अवस्था और गहरी नींद) में भी।" इसलिए यह पूर्ण वास्तविकता है – जन्महीन, मृत्युहीन और परिवर्तनहीन – जिसे उपनिषदों में "ब्राह्मण" कहा गया है। जगन मिथ्या (दुनिया एक भ्रम है): दुनिया "वास्तविक" केवल "जाग्रत अवस्था" में दिखाई देती है; लेकिन यह सपने में और गहरी नींद की स्थिति में यह गायब हो जाता है। इसलिए, उपरोक्त परिभाषा के अनुसार यह वास्तविक नहीं है। इसलिए आचार्य द्वारा संसार को मिथ्या कहा गया है। हालांकि, कई विद्वान "मिथ्या" शब्द से असहमत हैं, जब इसका उपयोग अवधारणात्मक दुनिया को संदर्भित करने के लिए किया जाता है। इस कारण से, शायद, शंकर, ब्रह्मसूत्र भाष्य की तरह अपने बाद के कार्यों में, इसे "व्यवहारिक सत्ता" (सापेक्ष वास्तविकता) या "प्रतिभासिका सत्ता" (स्पष्ट वास्तविकता) कहते हैं, जैसे कि उन्हें समायोजित करने के लिए।[7]

शंकरा ने वेदांत वेद का प्रचार किया। जिस तरह रस्सी पर सांप को फंसाया जाता है, उसी तरह इस दुनिया और इस शरीर को ब्राह्मण या सर्वोच्च स्व पर आरोपित किया जाता है। यदि आप रस्सी का ज्ञान प्राप्त करते हैं, तो सांप का भ्रम गायब हो जाएगा। फिर भी, यदि आपको ब्रह्म का ज्ञान हो जाए, तो शरीर और संसार का भ्रम मिट जाएगा।

ज्ञान की एक भी ऐसी शाखा नहीं है जिसे शंकर ने अविवेचित छोड़ दिया हो। उसके मन की उदात्तता, शांतता और दृढ़ता, वह निष्पक्षता जिसके साथ वह विभिन्न प्रश्नों का सामना करता है, उसकी अभिव्यक्ति की स्पष्टता–ये सब हमें और अधिकाधिक दार्शनिक का सम्मान करने के लिए प्रेरित करते हैं। हम कह सकते हैं कि उसनी शिक्षाएँ अनन्त काल तक जारी रहेंगी।

शंकर की विद्वतापूर्ण प्रखरता और जटिल दार्शनिक समस्याओं को उजागर करने के उनके उत्कृष्ट तरीके ने वर्तमान समय में दुनिया के सभी दार्शनिक स्कूलों की प्रशंसा हासिल की है। शंकर एक बौद्धिक प्रतिभा, एक गहरा दार्शनिक, एक सक्षम प्रचारक, एक प्रखर उपदेशक, एक प्रतिभाशाली कवि और एक महान धार्मिक सुधारक थे। शायद, कभी भी किसी साहित्य के इतिहास में, उनके जैसा मूर्धन्य लेखक नहीं मिला। वर्तमान समय के पश्चिमी विद्वान भी उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। सभी प्राचीन प्रणालियों में, शंकराचार्य को सबसे आधुनिक और आधुनिक मन को स्वीकार करने के लिए सबसे आसान माना जाएगा।[8]

निष्कर्ष

महान शंकर ने सत्य की खोज थी। जब वह आठ साल के थे तब उन्होंने संन्यास ग्रहण किया। 16 वर्ष की आयु तक, उन्होंने न केवल उपनिषदों, भगवद–गीता और अन्य प्रमुख वैदिक ग्रंथों पर टिप्पणी की बल्कि महारत भी हासिल की। भाष्य के रूप में जाने जाने वाले ये टिप्पणी भारतीय दार्शनिक लेखन के शिखर पर खड़े हैं। उन्होंने दर्शनशास्त्र, धर्म, तर्क और आध्यात्मिकता की झूठी धारणाओं को दूर कर दिया, जिसे लोगों ने मानना शुरू कर दिया था और अपने व्यावहारिक विश्लेषण और तर्क के साथ राष्ट्र को प्रबुद्ध किया। शंकर ने वेदों के ज्ञान का विस्तार करने के लिए भारत के चारों कोनों में धामों एवं मठों की स्थापना की। आदि शंकराचार्य ने अपनी वैज्ञानिक और उपनिषद दर्शन की तर्कसंगत व्याख्या द्वारा भारतीय संस्कृति के ठोस संपादन का मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने वेदांत के समयबद्ध सत्य को प्रतिपादित किया ताकि सभी लोग समझ सकें और अनुसरण कर सकें। भारतीय दर्शन में, वास्तव में मानवता के लिए उनका योगदान इतना स्थायी है कि बाद के सभी दार्शनिकों ने केवल उनके विचारों का खंडन या विस्तार करने की कोशिश की है बल्कि भारतीय दर्शन को वेदांत के साथ पहचाना जाने लगा है, जिस पर आदि शंकराचार्य ने टिप्पणी की थी। वह भारत में प्रचलित महान ऋषि–संस्कृति परंपरा का अवतार है, जिसके सबसे बड़े प्रतिपादक थे। आदि शंकराचार्य का संदेश आशा, सच्चाई और प्रेम का संदेश है। अपने जीवन के माध्यम से, शंकराचार्य ने सत्य से जीने के लिए हमारे सामने एक उदाहरण प्रस्तुत किया। कोई यह नहीं मानता है कि हिंदू दर्शन, जैसा कि हम आज जानते हैं, वास्तव में ठीक से व्यक्त किया गया था जिस तरह से यह आज है। शंकराचार्य समकालीन वैष्णव समुदायों की तुलना में शैव समुदायों के बीच अधिक प्रभाव डालते हैं। अद्वैत परंपरा के गुरुओं का सबसे बड़ा प्रभाव स्मृति परंपरा के अनुयायियों में रहा है, जो सनातन धर्म के भक्ति पहलुओं के साथ घरेलू वैदिक अनुष्ठान को एकीकृत करते हैं। श्री शंकराचार्य एक बौद्धिक और आध्यात्मिक कौतुक थे। वह उस उदात्त, पारलौकिक अवस्था का अनुभव कर सकता था, जैसे उपनिषद द्रष्टा करते हैं। इस प्रकार महान आचार्य अद्वैत के सत्य–सनातन धर्म के प्राचीन द्रष्टाओं की दृष्टि की पुष्टि और आज्ञा कर सकते हैं। उनके असामयिक निधन से पहले, उन्होंने अपने दर्शनशास्त्रियों द्वारा वेदांत पर तीन (वेदांत पर तीन मूल ग्रंथों, उपनिषद, भगवद गीता और ब्रह्म सूत्र) पर अपने भाष्यकारों द्वारा दृढ़ता से स्थापित किया था।

संदर्भ

1. www.britannica.com/biography/Shankara
2. THE HINDU, (FRIDAY REVIEW, FAITH) April 20, 2015
3. "The Secret Doctrine" Vol. 1, p. 522
4. https://www.biblicaltraining.org/library/philosophical-theology-sankara-ramanuja/introduction-to hinduism/timothy-tennent
5. http://www.dlshq.org/saints/sankara.htm
6. John Grimes (2004). The Vivekacudamani of Sankaracarya Bhagavatpada: An Introduction and Translation, ISBN 978-0754633952
7. http://archives.amritapuri.org/matruvani/vol-02/sep02/02mv09reality.php
8. http://www.hindupedia.com/hn/Adi_Shankaracharya